तृतीय अध्याय

डॉ. शंकर शेष के नाटकोंका सामान्य परिचय --

तृतीय अध्याय

डॉ.शंकर शेष के नाटकोंका सामान्य परिचय --

प्रस्तावना --

डॉ.शंकर शेष ने सन १९५५ से १९८१ तक की सुदीर्घ कालावधि में अनेक नाटकों का सृजन किया । उनके एक-दो नाटकों के अपवाद को यदि छोड दिया जाय तो सभी नाटकों का मंचन हो चुका है। विषयगत विविधता के कारण शेष के नाटक अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जा सकते हैं । डॉ.शेष द्वारा लिखा नाट्य साहित्य देखने पर कोई भी समझदार पाठक यह कहने की भूल नहीं करेगा कि हिन्दी में अच्छे नाटक नहीं हैं । यहाँ हम शेष के सभी नाटकों का संक्षेप में विवेचन करते हैं ।

(१) मूर्तिकार (सन १९५५)

डॉ.शेष जी की पहली कृति होने का सौभाग्य उनके `मूर्तिकार` नामक एकांकी को प्राप्त है,जो अब अप्राप्य है । लेखक ने अपने महाविद्यालयीन जीवन में मित्रों की माँग पर `मूर्तिकार` नामक एकांकी लिखा जिसे सफलता से खेला भी गया था । बाद में लेखक ने इसे `मूर्तिकार` नाम से तीन अंकी नाटक के रूप में परिवर्तित किया । इस संबंध में डॉ.विनय जी का कथन दृष्टव्य है --* सन १९५५-५६ में उनका पहला एकांकी नाटक नागपुर मेडिकल कॉलेज के छात्रों के लिए लिखा गया ।[१] यह कथन इसी `मूर्तिकार` नाटक का संकेत देता है । मूल एकांकी नाटक अप्रकाशित है और वह अब उपलब्ध भी नहीं है । प्रस्तुत `मूर्तिकार` नामक नाटक आर्य बुक डिपो, कश्मीरबाग ,नई दिल्ली से १९७२ में प्रकाशित हुआ है ।

कथावस्तु --

इस नाटक का नायक एक प्रतिभासंपन्न कलाकार है जिसका नाम है शेखर वह मिट्टी से मूर्तियाँ बनाता है । अपनी प्रतिभा के सहारे वह निर्जीव मिट्टी को मूर्ति के रूपमें जीवंत करता है । गरीब होने से कनवास और रंग के लिए भी उसके पास

१ डॉ.विनय : शेष कृत - बाढ का पानी - पृ.५ ।

पैसे नहीं है । उसकी पत्नी ललिता कठिन संकट में उसका साथ देती है । सतीश नामक एक युवक पैसों का लालच दिखाकर शेखर की बहन नीलु को प्रेमजाल में फँसाता है । शादी के पहले नीलु गर्भवती होती है । सतीश उसे ठुकराकर चला जाता है । प्रस्तुत कृति में कलाकार के जीवन की शोकांतिका दिखाई देती है । कलाकार के चले जाने के बाद उसकी सही कीमत समाज को मालूम होती है । लेकिन जब तक वह जीवित होता है,तब तक उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं देता यह हमारे समाज की रीति है ।

(२) रत्नगर्भा - (सन १९५६)

यह कृति जगतराम एण्ड सन्स मेन रोड, गांधीनगर,दिल्ली द्वारा सन १९८४ में पहली बार प्रकाशित हुई ।

कथावस्तु --

इस नाटक में नाटककार ने इला और सुनील के जीवन संघर्ष की गाथा प्रस्तुत की है । सुनील प्रतिष्ठित डॉक्टर है । पत्नी इला सुनील को उच्च शिक्षा के लिए अपने जेवर बेचकर पैसों का प्रबंध करती है । विदेश जानेपर सुनील अपनी पत्नी के प्रेम और पातिव्रत्य से एकनिष्ठ रहता है । इसी बीच स्टोव फटने की दुर्घटना में इला का खूबसूरत सुन्दर चेहरा कुरुप हो जाता है विदेश से लौटकर सुनील यह सब कुछ देखता है । पर इला की निष्ठा ,भोलापन,प्रेम,त्याग आदि से प्रभावित होकर उससे अलग होना स्वीकार नहीं करता ।लेकिन अपने मित्र जगदीश के बहकावे में आकर बाद में वह कुरुप इला से घृणा करने लगता है । नाटककारने स्पष्ट किया है कि प्रेम और मन उन्नीसवीं शताब्दी की बातें हैं । समाज में मनुष्य उपासक है,सुन्दरता और धन का । उसकी सौन्दर्यानुभूति शारीरिक सौन्दर्य तक सीमित है । वह आत्मिक सौन्दर्य को देखने की कोशिश नहीं करता । इसी कारण सुनील इला के जीवन से अयावह खेल खेलता है । आखिर इला का आंतरिक प्रेम, निष्ठा ,त्याग सुनील में परिवर्तन लाता है ।

इस नाटक में सौन्दर्य ,धन,प्रतिष्ठा,निष्ठा,त्याग के संघर्ष को दिखाया है । दुर्बलता से ग्रस्त नारी जीवन शोकात्म बन जाता है । तब वह कहीं की नहीं रह जाती है । भारतीय नारी की हैसियत से वह पति के फटकारने पर भी उससे

निष्ठा बनाये रखती है ।` भावना को जब भावना से विजित किया जाता है तो मनुष्यता का यशास्तिलक होता है लेकिन भावना जब स्वार्थ के सीलन भरे पैबन्द लगाए जाते हैं तो मनुष्यता और उसके चिरपालित शाश्वत सत्य,प्यार जैसे भाव भी पराजित हो जाते है ।" [२]

यह नाटक तीन अंको में विभाजित है । कथा के प्रथम अंक में संघर्ष का आरंभ होता है और द्वितीय अंब में संघर्ष का पर्याप्त विकास होता है । अंतिम अंक में संघर्ष अग्रेसर होकर समाप्त होता है । इस नाटक के संवाद संक्षिप्त सुबोध है । इसकी भाषा सरल,सुबोध,बोलचाल की एवं कथा चरित्र विकास में उचित योग देती है । प्रतिष्ठित लोगों की मनोवृत्ति का पर्दाफाश करना नाटक का उद्देश्य है ।

(३) नई सभ्यता के नये नमूने (सन १९५६)

यह डॉ.शेष का तीसरा नाटक है । इसके संदर्भ में डॉ.सुनीलकुमार लवटे जी का कथन दृष्टव्य है --" यह डॉ.शंकर शेष ने ` मिथक` का प्रयोग कर लिखी हुई प्रथम नाटयकृति है । वैसे यह कृति मिथक के द्वारा समकालीन समाज व्यवस्था एवं चारित्र्य पतन की समस्या का उद्घाटन करनेवाली रचना है ।"[३] इस नाटक द्वारा शंकर शेष जी ने समाज में जो विघातक प्रवृत्तियाँ होती है जैसे अन्याय,अत्याचार, गलत ढंग से धन कमाना,सज्जनता का स्वांग रचाना इन सभी का पर्दाफाश किया है । नाटककार ने दुराचारी समाजद्रोहियों के हर चाल के पीछे जो षड्यंत्रकारी वृत्ति होती है उसका यहाँ चित्रण किया है ।

(४) बेटोंवाला बाप (सन १९५८)

इस नाटक का मंचन नागपुर में हो चुका था । इस संबंध में डॉ.सुनीलकुमार लवटे जी का कथन दृष्टव्य है --" एक से बढकर एक नाटय कृति के निर्माण की ललक ने आगे` बेटोंवाला बाप` १९५८ नाटक को जन्म दिया । इसी समय नागपुर में धनवटे नाटयगृह का विमोचन तत्कालीन प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू के हाथों से संपन्न

---

२ डॉ.सुरेश गौतम डॉ.वीणा गौतम - राजपथ से जनपथ ,नटशिल्पी शंकर शेष - पृ.६५ ।

३ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.३० ।

हुआ था । सर्व सुविधाओं से सपन्न एवं पर्याप्त आधुनिक इस रंगभूमिपर मंचन होना हर कलाकार के लिए गौरव की बात थी । डॉ.शेष को यह गौरव प्राप्त हुआ । धनवटे नाटयगृह में संपन्न `बेटोंवाला बाप` का प्रथम प्रयोग काफी सराहा गया ।"[४] यह नाटक अनुपलब्ध होने के कारण इस नाटक के बारेंमे अपना मत व्यक्त करना कठीन है ।

(५) तिल का ताड (सन १९५८)

प्रस्तुत रचना के संबंध में डॉ.सुनीलकुमार लवटे जी का कथन दृष्टव्य है -- ` बेटोंवाला बाप` की ही समकालीन नाटय रचना है। `तिल का ताड` (१९५८) इसमें डॉ.शेष ने प्राणनाथ और रजंना के माध्यम से प्रेमी युगलों की क्षणिक भावुकता का चित्रण किया है । यह एक प्रेम संबंधों की कथा को लेकर चलनेवाली नाटयरचना है । इसमें नाटककार ने हमारी सामाजिक स्थिति पुरखों की संकीर्ण मनोवृत्ति जैसी बातों पर अपनी राय व्यक्त की है ।"[५]

कथावस्तु --

प्रस्तुत नाटक में प्राणनाथ इंजिनिअर है । वह शहर में किराये के मकान में रहता है । वह पडोस की रंजना नामक युवती से प्रेम करता है । प्राणनाथ के घर के मालिक हैं धन्नामल । धन्नामल का परिवार बडा है । उनके बच्चें मानो एक फूटबॉल की टीम है । धन्नामल पुराने संस्कारों का आदमी है । अत: अपने घरमें अनब्याहे युवक को रखना पसंद नहीं करता है । प्राणनाथ ने झूठ-मूठ कहकर ही मकान प्राप्त किया था । इधर दिनोंदिन धन्नामल उसे बीवी लाने की जिद करता है । अन्यथा घर छोडने की सलाह देता है । प्राणनाथ के सामने समस्या है । इसी बीच प्राणनाथ मंजू नामक एक असहाय युवती की गुण्डों से रक्षा कर घर लाता है । धन्नामल से बचने के लिए वह मंजू से बीवी बनने का नाटक करने को कहता है । यह नाटक `तिल का ताड` बनता है और आखिर उसे रंजना के बदले मंजू से ही शादी करनी पडती है ।

---

४ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.१० ।

५ वही पृ.१०-११ ।

इसमें प्राणनाथ और मंजु प्रमुख पात्र हैं । गयाप्रसाद,पतीतपावन,ब्रह्मचारी, धन्नामल,बनारसीदास,रंजना गौण पात्र हैं । नाटक के संवाद याने हास्य-व्यंग्य के फैवारें हैं । नाटक की भाषा बोलचाल की एवं सरल है । मनोरंजन नाटक का उद्देश्य है । नाटक का शीर्षक मार्मिक है । 'तिल का ताड' शिल्प और शैली दोनों दृष्टियों से औसत स्तर की नाट्यकृति है ।" [६]

(६) बिन बाती के दीप (सन १९६८)

डॉ.शंकर शेष की यह सर्वप्रथम प्रकाशित रचना है । वैसे लेखन क्रम की दृष्टि से देखा जाय तो यह छठी नाटयकृति है । श्री विनायक चासकर के निर्देशन में भोपाल की 'नाटयसुधा संस्था ने इसका प्रथम मंचन किया था ।' इस नाटयकृति के माध्यम से नाटककार डॉ.शेष ने स्त्री-पुरुष संबंधों की व्याख्या नये परिपार्श्व में करने का प्रयास किया । अतिरिक्त महत्वाकांक्षा की धुन सवार होनेवाले व्यक्ति के चारित्रिक अध:पतन को चित्रित करना कृति का लक्ष्य है ।" [७]

कथावस्तु --

इस नाटक का नायक शिवराज एक साधारण कवि है । राष्ट्रीय स्तर पर ख्याती पाने के मकसद ने उसे पागल बना दिया है । अपनी इच्छा पूर्ति के लिए वह विशाखा नामक अंध परंतु प्रतिभाशाली लडकी से शादी करके उसका लिखा उपन्यास अपने नामपर छपवाता है । कम विद्वान लोगों को थोडे से ग्यानपर कुछ ज्यादा पाने की महत्वकांक्षा विवश करने लगती है । महत्वकांक्षा के बहकावे में आकर वे अंध बन जाते हैं । उस वक्त नीति-अनिति,सत-असत,अच्छा-बूरा उसके बारेमें वे सोचते नहीं । अंत में आनंद अपने पति के इस व्यवहार का परिचय विशाखा को करवाता है ।लेकिन विशाखा इससे दु:खी नहीं होती । वह अपने आप को सुखी मानती है ।क्योंकि वह सोचती है कि मुझ जैसी एक अंधी औरत को शिवराज ने धर्म पत्नी के रूप में स्वीकारा है । वह कहती है मेरी हर एक रचना शिवराज की दी हुअी सोहबत का ही प्रसाद है ,फल है ।

६ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.३४ ।
७ वही पृ.३५ ।

नाटक की भाषा सुबोध एवं सहज है। कहीं कहीं हास्य-व्यंग्य का भी प्रयोग किया गया है। शिवराज तथा विशाखा नाटक के प्रमुख पात्र हैं। बिन बाती के दीप यह शीर्षक विशाखा की अँधी आँखों का प्रतीक है। यह एक सफल नाटय कृति है।

(७) बाढ का पानी : चंदन के दीप (सन १९६८)

इसका प्रथम मंचन भोपाल की ` नाटयसुधा ` ने किया। यहाँ डॉ.विनय का कथन दृष्टव्य है --" १९७४ तक शंकर शेष ने आठ नौ नाटक लिखे गये जिसमें बाढ का पानी और चंदन के दीप तथा बंधन अपने अपने मध्यप्रदेश शासन द्वारा पुरुस्कृत हुए। इन नाटकों का विभिन्न संस्थाओं ने मंचन किया,साथ ही आकाशवाणी भोपाल से अधिकांश नाटक प्रसारित भी हुए।" [८]

अत: डॉ.विनय जी के कथनानुसार प्रारंभ में इसका शीर्षक` बाढ का पानी और चंदन के दीप` दिया गया लगता है जिसे प्रकाशन के समय बाढ का पानी इतना ही संक्षिप्त किया गया है।

कथावस्तु --

नाटक का मुख्य लक्ष्य समाज में बढती जा रही जातिवाद की विनाशक बाढ पर मानवता का बाँध बाँधकर,उसे सृजन की ओर मोड चंदन के दीप में पर्यवसित करना है। हमारी जाति व्यवस्था एक ऐसा पुराना किला है जो हममें हमेशा सुरक्षा का भ्रम पैदा करता रहता है,हम उसी में छिपकर रहना चाहते हैं,पर उससे मनुष्यता का विकास नहीं होता।` बाढ का पानी` नाटक में जातीयता की समस्या को उठाया है।

जाति भेद ने कितने कर्णों को निस्तेज किया होगा,जाति-पाँति की इसी संकीर्ण मनोवृत्ति ने एकनिष्ठ,समर्पित गुरुभक्त एकलव्य को कुचल दिया। छलकपट से द्रोणाचार्य ने उसे अपाहिज बना दिया। धर्म च्याननेवाला हर देश है पर जात-पात का रोग केवल भारत देश में है।` जातिवाद के अभिशाप से मुक्त होना मानव

---

८ डॉ.विनय - शंकर शेष कृत - बाढ का पानी - पृ.६।

कल्याण के लिए आवश्यक है ।

इस नाटक की भाषा सरल और सुबोध है तो संवाद छोटे छोटे और प्रभावपूर्ण । यह एक डॉ.शेकर शेष की महत्वपूर्ण नाटयकृति है ।

(८) बंधन अपने अपने (सन १९६९)

वस्तु विन्यास,कथा संगठन और शिल्प के कसाव की दृष्टि से देखा जाय तो प्रस्तुत नाटय कृति बाढ का पानी के पूर्व की लगती है ।* यह कृति सन ७२-७३ के लगभग अजादि प्रकाशन,इलाहाबाद से प्रकाशित हुई । इसका प्रथम मंचीकरण ` नाटयसुधा ` के चतुर्थ वार्षिक समारोह के अवसर पर दिनांक २५ सितम्बर,१९७१ को रवींद्र नाटयगृह,भोपाल में हुआ । रंगमंच व्यवस्था की जिम्मेदारी सुविख्यात निर्देशक श्री विनायक चासकर को सौंपी गयी थी । रंगभूषा में मराठी के सुविख्यात नाटककार श्री वसंत कानिटकर ने मार्गदर्शन किया था । श्री कृ.शि. मेहता तथा मानु चंदवासकर के निर्देशन में गजानन नागचण्डी ने इस कृति को प्रस्तुत किया ।* [९]

कथावस्तु --

आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में जो बुरी प्रथाएँ आने लगी हैं,जो बुराइयाँ नजर आती हैं,उन पर डॉ.शेष जी ने इस नाटक के द्वारा प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है । इस नाटक का नायक डॉ.जयंत बडे कठिन परिश्रम के बाद विश्वविद्यालयों में लिपिशास्त्री के पद पर बैठता है । अध्ययन-अध्यापन,मनन-चिंतन,यह उसकी दुनिया है । उनका छोटा भाई अनादि एम.एस.सी.के बाद विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक के रूप में काम करता है । चेतना नामक एक छात्रा डॉ.जयंत के मार्गदर्शन में अनुसंधान कार्य करना चाहती है । चेतना के साथ अनादि का परिचय होता है । बाद में दोस्ती होती है । दोस्ती का रूपांतर प्यार में होता है । प्रा.तर्कतीर्थ के कहने के अनुसार डॉ.जयंत अब शादी करना चाहते हैं । वे चेतना को शादी के लिए खत भी

---

९ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शेकर शेष - पृ.३७ ।

लिखते हैं । जब अपने भाई और चेतना के संवाद उन्हें मालूम होते हैं,तब वे दूर वॉशिंग्टन जाकर एकाकी जिंदगी बिताना चाहते हैं ।

आजकल शिक्षा व्यवस्था में जो भ्रष्ट आचरण नजर आने लगा है,गुरू-शिष्योंमें जो अनैतिक संबंध नजर आने लगे हैं,गुरू और शिष्य में जो मर्यादा चाहिए वह दिन-ब-दिन खत्म होती जा रही है । इन सबको देखकर नाटककार चिंतित हुए हैं । इन बातोंपर प्रकाश डालने का काम बंधन अपने अपने इस नाटक में किया है । किताबों की दुनिया से बढकर और एक दुनिया है जिसका हमें विचार करना चाहिए यह बात नाटककार ने स्पष्ट की है ।

(९) खजुराहो का शिल्पी (सन १९७०)

नाटककार के रूप में डॉ.शैकर शेष को राष्ट्रीय मंच पर लाने का कार्य 'खजुराहो का शिल्पी' ने किया । डॉ.शेष ने प्रथमत: यह कृति रेडियो प्रसारण के हेतु लिखि थी । नाटक में मंच की मर्यादाओं को लाँघनेवाले दृश्यों का होना यही बताता है । मंच पर खजुराहो के शिल्प लाना चुनौती ही कही जायेगी । ऐसा होकर भी श्री उत्तमसिंह तोमर ने इसे स्वीकृत कर बंबई में उसका सफल मंचन किया । रेडियो पर पुल रूप में प्रसारित नाटकीय दृश्यों और मंच पर प्रस्तुत किये गये दृश्यों में फर्क होना स्वाभाविक है और मंचन की मर्यादाओं को देखते हुए उचित भी है । राष्ट्रीय प्रसारण में यह नाटक सभी भारतीय भाषाओं में प्रसारित होता है । श्रोताओं ने इसका सहर्ष स्वागत किया ।' शैकर शेष की यह कृति उनके नाटक फैंदी की तरह लम्बे चिंतन और मनन की उपज है ।' [१०]

कथासूत्र --

राष्ट्रीय प्रसारण में यह नाटक सभी भाषाओं में प्रसारित हुआ । सभी श्रोताओं ने इसका सहर्ष स्वागत किया । संसार में कामभावना निरंतर गतिशील भावना बनकर स्थायी रही है । मनुष्य में सकाम और निष्काम प्रवृत्तियाँ प्राचीन

---

१० डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शैकर शेष - पृ.३९ ।

कालसे बनी रही है। लाख कोशिश करने के बाद भी ` मोह` का क्षण निरंतर हावी रहता है।` खजुराहो का शिल्पी ` इस संघर्ष को लेकर उपस्थित होता है। खजुराहों का मंदिर भारतीय स्थापत्य विद्या का मानबिंदू है। यह मंदिर जीवन में होनेवाले मोक्षा के आनन्द का रहस्य है। मंदिर की रचना तीन वर्ग में बंटि लोगों का प्रतिनिधित्व करती है। मंदिर का बाहरी भाग मिथुन मुद्राओं से अंकित है। संसार में कुछ ऐसे लोगों का एक वर्ग है जो मिथुन मूर्तियों की तरह वासना में डूब गया है। वे मांसल सौन्दर्य के उपासक हैं। मंदिर का बाहरी हिस्सा मानव की इस कृति का प्रतिक है। संसार में कुछ ऐसे भी लोग हैं जो वासना में बह नहीं जाते। इस वर्ग के लोग काम से मोक्षा की ओर मार्गक्रमण करते हैं। यह मंदिर का मध्य भाग है। तीसरे वर्ग के लोग संसार से पूर्णत: अलग हैं। अध्यात्म उनके जीवन का सर्वस्व है।

` खजुराहों का शिल्पी` की कथावस्तु एक अर्थ में खजुराहों के मंदिर निर्माण की कथा है। हेमवती की इच्छापूर्ति के लिए राजा यशोवर्मन मेघराज आनन्द शिल्पी को मंदिर निर्माण की आज्ञा देते हैं। मॉडेल के रूप में अपनी पालित कन्या अलका को देते है।मंदिर निर्माण के काल में अलका शिल्पी मेघराज के प्रति आकर्षित हो जाती है। किन्तु वह अलका का अस्वीकार कर अपने मोह के क्षण को जीत लेता है।

इस नाटक की भाषा सरल,सुबोध एवं प्रभावपूर्ण है। संवाद छोटे और चुस्त बन बैठे हैं। यह नाटय रचना नाटय कला की दृष्टि से सफल है।

(१०) <u>फन्दी</u> (सन १९७१)

डॉ.शेष की प्रस्थापित नाटय परंपरा की लीक से हटकर विषय एवं नाटक तंत्र की दृष्टि से सर्वथा नया मार्ग प्रशस्त करनेवाली नाटयकृति के रूप में फन्दी का महत्व नि:संदेह असाधारण है। नाटककार के अपने ही शब्दों में --

` फन्दी` इस नाटक का एक पात्र मात्र नहीं है,वह एक जीवन दृष्टि का जीवित प्रतीक भी है ।" [११]एक व्यापक जीवनदृष्टि को तथा` दया-मृत्यु` की समस्या को नाटककारने प्रस्तुत कृति में व्यक्त किया है ।` सज़ुराहों का शिल्पी` नाटक की यशास्विता के बाद डॉ.शेष` फन्दी` नाटक को प्रस्तुत कर आधुनिक हिन्दी नाटय-क्षेत्र के नये हस्ताक्षार के रूप में लोगों का ध्यान आकृष्ट करने में सफल हुए । ऐतिहासिक नाटक की यशास्विता के तुरंत बाद` फन्दी ` जैसा पूर्ण वर्तमानकालीन और जागतिक स्तर पर बहुचर्चित समस्या से युक्त नाटक प्रस्तुत कर डॉ.शेष ने अपनी प्रतिभा की क्षामता का परिचय दिया है ।

` स्वयं साक्षा के अनुसार प्रस्तुत नाटक का लेखन काल सन १९७०-७१ रहा है ।" [१२]

अनादि प्रकाशन,इलाहाबाद से इसका प्रकाशन हुआ है ।

कथावस्तु -

` फन्दी` नाटक न्याय की प्रचलित मान्यताओं को झाकझोरते हुए मार्मिक प्रश्न सामने रखता है । यदि किसी के प्यारे कुत्ते को जहर की गोली दे दी जाती है तो उसको पीडा या छटपटाहट को मिटाने के लिए उसका मालिक गोली मारकर उसे सुला देता है ।` यदि पशु मनुष्य की करुणा का अधिकारी हो सकता है तो मनुष्य क्यों नहीं ।" [१३] फन्दी अपने पिता की हत्या करता है । अपने कैंसर से पीडित पिता को फन्दी मुक्ति दिलाना चाहता है । पिता फन्दी से बार-बार मृत्यु मॉगता है । पल-पल वे मृत्यु की प्रतीक्षा करते है ।फन्दी से अपने पिता की वेदना,असहाय तडपन देखी नहीं जाती । नींद का इंजेक्शन फन्दी गरीबी के कारण ला नहीं सकता । पिताजी कहते हैं -" बेटा इन्जेक्शन दो या मौत दो ।"[१४]फन्दी मौत जरूर दे सकता था । इसलिए उनके हाथ अनजाने पिता के गलेको कस लेते हैं ।

---

११ डॉ.शंकर शेष - फन्दी - पृ.५ ।
१२ वही पृ.५ ।
१३ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.४७ ।
१४ वही पृ.४५ ।

पिताजी की मृत्यु हो जाती है ।

इस नाटक का केन्द्रबिंदू फन्दी है । फन्दी पिता का हत्यारा है या नहीं ? यही प्रश्न अदालत में गंभीर विवाद खडा करता है । पीडित आदमी की हत्या अपराध कैसे हो सकता है ? इस विवाद का हल प्रस्तुत रचना में करने की चेष्टा डॉ.शंकर शेष जी ने की है ।

(११) एक और द्रोणाचार्य (सन १९७१)

डॉ.शंकर शेष ने जीविका के रूप में अध्यापक का व्यवसाय चुना था । एक दशक तक की दीर्घ कालावधी तक वे कालेजों में पढाते रहे । दस वर्षों की अवधि में जहाँ एक ओर उन्होंने छात्र तथा अध्यापकों को गौरसे देखा वहीं दूसरी ओर शिक्षा व्यवस्था की सच्चाइयों का भी जायजा लिया । डॉ.शेष खुद सरकारी सेवा में थे । शिक्षा जैसे पर्याप्त संवेदनक्षम क्षेत्र में लालफिताशाही कैसे हस्तक्षेप करती है,निजी शिक्षा संस्थाओं के विश्वस्त सामन्तशाही परंपरा का निर्वाह कर अध्यापक के साथ कैसा सलूक रखते हैं, इन सारी बातों को उन्होंने नजदीक से देखा था । शिक्षा डॉ.शेष के जीवन दर्शन का अभिन्न अंग रही है । इसके पूर्व उन्होंने बंधन अपने अपने जैसा नाटक लिखकर शिक्षा क्षेत्र के प्रति होनेवाली अपनी आस्था को व्यक्त किया है । उस नाटक में शिक्षा क्षेत्र में प्रचलित कृष्णा-- कृत्यों का पर्दाफाश करना लक्ष्य था । एक और द्रोणाचार्य शिक्षा के संदर्भ में नाटककार के प्रौढ चिंतन का स्वर देनेवाली नाट्यकृति है ।

प्रस्तुत कृति का प्रथम संस्करण कब निकला यह बताना कठिन है । अत: इसके प्रयोगों के आधार पर कहा जा सकता है कि इसका लेखन काल फन्दी के बाद रहा हो तथा वह सन १९७१-७२ की अवधि में रहा हो । इसका चतुर्थ संस्करण पराग प्रकाशन,दिल्ली से सन १९८३ में प्रकाशित हुआ है ।

कथावस्तु --

महात्मा कबीर दासजी के अनुसार गुरू का महत्व ईश्वर से बढकर है ।पुराने जमाने से लेकर आज तक गुरू को पवित्र माना जाता है । लेकिन आधुनिक शिक्षा

व्यवस्था में होनेवाले अध्यापकों को स्वार्थ और लालच का आकर्षण है। डॉ.शेष गुरू के इस पतन को देखकर दु:खी नजर आते थे। व्यवस्था के हाथों अपने को बेच देना, अपनी अस्मिता को तिलांजली देने की भावना गुरू में आज ही नहीं है वह पुराने कालसे चली आयी है। यह दिखाने के लिए उन्होंने महाभारत के द्रोणाचार्य का उदाहरण दिया है। द्रोणाचार्य की पत्नी और पुत्र केवल अपने स्वार्थ के लिए अन्यायी कौरवों का साथ देने के लिए द्रोणाचार्य जैसे महान गुरू को विवश बनाते हैं। उनका विरोध वे नहीं कर पाते हैं। सत-असत को भूलकर कौरवों के इशारे पर नाचते हैं। न दी हुई शिक्षा के लिए एकलव्य से गुरूदक्षिणा लेकर उसे अपाहिज बनाते है। द्रोपदी वस्त्रहरण के वक्त वहाँ वे उपस्थित थे फिर इस बुरे प्रसंग को वे रोक नहीं सकें। एक गुरू होते हुए भी कुछ नहीं कर सके। गुरू के बारेमें पुराने जमाने में उनका वाक्य वेद के समान थे। लेकिन पहली बार द्रोणाचार्य ने गुरू के इस महान चरित्र को अपमानित,कलंकित किया है। मिट्टी में मिलाया है। अध्यापक व्यवस्था के हाथ की कठपुतली बना हुआ नजर आता है। अपना फर्ज और अधिकार वह भूलने लगा है। इस नाटक के माध्यम से आज शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में नजर आनेवाले काले कारनामों का पर्दाफाश करना शेष जी का उद्देश था।

(१२) कालजयी (सन १९७३)

यह डॉ.शेष की ऐसी कृति है,जो हिन्दी रंगमंचपर मंचित नही हुई है। डॉ. सुनीलकुमार लवटे जी के अनुसार' डॉ.शेष ने जितने नाटक लिखे सबका मंचन हुआ। अपवाद सिर्फ' कालजयी ' है। परंतु उसके मराठी रूपांतरने मंचन का गौरव जरूर पाया है। मंचन की शृंखला को बरकरार रखकर डॉ.शेष ने नाटककारों में नया कीर्तिमान स्थापित किया है।"[१५] परंतु डॉ.सुनीलकुमार की कृति में इस कृति में इस कृति का मराठी अनुवाद किसने और कब किया तथा मंचन कब और कहाँ हुआ यह निश्चित ज्ञात नही हो सका है।

---

१५ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.५२।

कथावस्तु :

एक ओर द्रोणाचार्य में नाटककार ने पौराणिक संदर्भ को आधुनिक जन जीवन के साथ जोडा था । `कालजयी` में वे एक ऐतिहासिक कथा के जरिए राजनीति की व्याख्या करना चाहते हैं । इस नाटक का प्रमुख पात्र है राजा कालजयी जो लोगों के शरीर पर अपने अधिकार से राज्य करना चाहता है । वह अन्याय,अत्याचार करता है । लेकिन लोगों के दिलपर अधिकार करना बहुत कठिन होता है । अपने राज्य - कारोबार के नशा में कालजयी व्यस्त है । न्यायकेतु और विजयकेतु राजा के इस अत्याचार का विरोध करते हैं । इन लोगों की तरफ कालजयी ध्यान नहीं देता । कालजयी के अन्याय अत्याचार से सामान्य जनता तंग आ चुकी है । लोग न्यायकेतु, विजयकेतु के विचारों को मानने लगते हैं । उन्हें अपना मुखिया बनाकर प्रजातंत्र की मॉग करते हैं । राजा इसमें सफल होता है । न्यायकेतु असफल होता है । वह अपनी हार स्वीकार करके कालाजयी से प्राणदण्ड की मॉग करता है । वह उन्हें मृत्युदण्ड नहीं देता । राजा सत्ता के अस्तित्व को ठेस पहुँचाना नहीं चाहता था । विरोध बढता है लेकिन उसमें शक्ति नहीं है । अंत में न्यायकेतु ,विजयकेतु की शक्ति से बचनेवाले कालजयी जैसे अन्यायी राजा की मौत नाटककार ने पूरबी जैसी स्त्री के हाथों से दिखायी है । राजनीति में जो बडे-बडे सॅक टॉसे,मुस्कीलो से बचते हैं वे छोटीसी या उपरी तौरपर से मामूली नजर आनेवाली घटनाओं से समाप्त होते हैं, यह दिखाना नाटक का उद्देश्य है । साथ ही यह स्पष्ट करना की कोई अकेला कालजयी नहीं होता,राजनीति हमेशा परिवर्तन चाहती हैं ।

(१३) धरौन्दा (सन १९७४-७५)

डॉ.शेष ने सन १९७४ में मध्यप्रदेश की शासकीय सेवा से इस्तीफा देकर भारतीय स्टेट बॅन्क के बंबई स्थित कार्यालय में राजभाषा विभाग के मुख्याधिकारी की हैसियत से पदभार संभाला । बंबई आनेपर प्रारम्भ में उन्हें अपने लिए मकान की व्यवस्था करने में भी दौड धूप करनी पडी । कई संकटों का सामना करना पडा । अत: हो सकता है,अपने निजी अनुभवो महानगरों की निवास-व्यवस्था की जटील समस्या की गहराई की ओर उनका ध्यान खींचा हो । इसका पूरा प्रतिबिंब `धरौन्दा`

नाट्यकृति के रूप में सामने आया है। प्रारम्भ में इसका शीर्षक 'अनिकेत' था इस संदर्भ में डॉ.विनय का कथन दृष्टव्य है" बंबई की चित्रनगरी ने भी शेष जी के नाटकों का स्वागत किया। उनका 'अनिकेत' नाटक जो 'घरौन्दा' के नाम से प्रकाशित है। भीमसेन द्वारा फिल्म के लिए चुना गया। 'घरौन्दा' के नाम से इस चित्र का निर्माण हुआ है।"[१६] इसका द्वीतीय संस्करण पराग प्रकाशन,दिल्ली द्वारा १९८४ में प्रकाशित हुआ है।

कथावस्तु --

वर्तमान जीवन का यथार्थ चित्रण करनेवाला 'घरौन्दा' नामक हिन्दी नाट्य-सृष्टि की अनमोल निधि है। समाज के मध्यवर्गीय लोगों के घर के स्वप्न की कथा को लेकर घरौन्दा नाटक लिखा है। बंबई जैसे महानगरों में घर की समस्या किस तरह दिन-ब-दिन बिकट होती जा रही है इसका चित्रण प्रस्तुत रचना में दृष्टिगोचर होता है। इस नाटक पर चौथे और पाँचवे अध्यायों में विस्तार से विवेचन किया जा रहा है अत: यहाँ इस पर अधिक विवेचन नहीं किया है।

(१४) अरे मायावी सरोवर (सन १९७४-७५)

प्रस्तुत कृति के लेखन काल के संबंध में भी निश्चितता नहीं है। डॉ.सुनील-कुमार लवटे इसे १९७४ की कृति बताते हैं। संभवत: यह १९७४-७५ में लिखी गयी हो। इसके प्रथम प्रकाशन के संबंध में भी निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं होती। संभवता वह १९८० भी रहा हो। डॉ.दशरथ ओझा जी के कथानानुसार 'मायावी सरोवर' १९८० में प्रकाशित हुआ है।"[१७] इसका द्वीतीय संस्करण,पराग प्रकाशन, दिल्ली द्वारा सन १९८१ में प्रकाशित किया गया है।

पंडित सत्यदेव दुबे के अनुसार इस रचना का प्रथम नाम 'राजा इत्वलु' था

---

१६ डॉ.विनय : डॉ.शेष कृत - बाढ का पानी - पृ.७।

१७ डॉ.दशरथ ओझा : आज का हिन्दी नाटक प्रगति और प्रभाव,पृ.६६।

जो अरे मायावी सरोवर में बदला गया । आप लिखते हैं --" शेष ने नाटक का नाम राजा इत्वलु रखा था,उसे बदलकर रखा गया मायावी सरोवर पर थियटर युनिट की परंपरा में पलक झापकते ही वह अरे मायावी सरोवर हो गया ।" [१८]

कथावस्तु --

राजा इत्वलु चेतनानगर जैसे सुसंपन्न प्रदेश के महाराज हैं । मनशुध्दि के लिए आत्म शांति के लिए वे शबरी नारायण तीर्थ के स्थानपर जाना चाहते हैं । पत्नी सुजाता और महाराज इत्वलु दोनों मिलकर सैर के लिए राज से बाहर निकलते हैं । इस वन की महिमा अगाध है । यहाँ शेर घाँस खाता हुआ नजर आता है । गाय जैसी पवित्र समझाने वाली हमारी आदरणीय गोमाता माँस भक्षण करती है । राजा के मन में नहाने की बात आती है और नहाते वक्त राजा नारी बनता है । राजा अकेला वन में रहता है । एक ऋषि पर राजा आसक्त होता है । राजा को पुत्र होता है । पुत्र अंशुमाल दिग्विजय हासिल करने के लिए राज से बाहर निकलता है । ऋषिपूत्र कुमार अंशुमाली को पहचानता है । अंत में राजा रानी का मिलन दिखाया है । फिर राजगद्दी के लिए संघर्ष शुरु होता है । यह संघर्ष का वातावरण देखकर देवाधिपति इंद्र स्वयं अवतरित होकर इत्वलु को पुरुष का रूप देते हैं और नाटक समाप्त होता है । इसमें उत्लु को कुलपति दिखाकर शिक्षा व्यवस्थापर कडा प्रहार किया है ।

(१५) रक्तबीज : (सन १९७७)

प्रस्तुत कृति ऑक्टोपास के नाम से प्रथम सन १९७७ में लिखी गयी थी । इसके मंचन के संबंध में बंबई की सुप्रसिध्द रंगसंस्था आविष्कार के प्रमुख श्री अरविंद देशपांडे ने पहल की । इसके कथ्य ने उन्हें कितना झकझोर डाला होगा इसका अंदाज इनके निम्नस्थ कथन से लग जाता है --" जिस दोपहर खाने के समय 'रक्तबीज' के मंचन का निर्णय लिया गया,वह मेरे घर में दोपहर के भोजन का सब से लम्बा

---

१८ पं.सत्यदेव दूबे : परिशिष्ट - ५ ।

दिन था ।[१९] इसका ३० मार्च १९७८ को `आविष्कार` द्वारा बंबई में प्रथम मंचन हुआ ।

कथावस्तु --

`रक्तबीज` नाटक में डॉ.शंकर शेष ने उच्च मध्यवर्ग की स्वार्थी,संकुचित मनोवृत्ति का चित्रण किया है ।`रक्तबीज` नाटक में मानसिक संघर्ष दिखाया है । छोटा आदमी बडा आदमी,स्त्री इस त्रिकोणात्मक संबंधों को आधार बनाया है । आधुनिक युग में हर छोटा आदमी बडा बनना चाहता है । इस महानगरीय जिंदगी में मेहनत,ईमानदारी,बेकार है । ईमान का निलाम करके राजमार्ग की पगडंडियाँ इस्तेमाल की जाती हैं । बडा बनने की चाह में वह स्त्री की बलि देता है और टी.वी., फ्रिज,कार,कारपेट,केबीन की अच्छी वैभवशाली जिंदगी जीना चाहता है । महानगरीय जिंदगी में जीनेवाला हर आदमी अपनी प्रतिष्ठा के लिए दुसरे का इस्तेमाल करता है । प्रतिष्ठा,बडप्पन,महत्वाकांक्षा आदि इस दुनिया के लोगों के खून के रक्तबीज बने हैं ।

इस नाटक की कथा में मि.शमी को निम्न वर्ग की आदमी दिखाया है जो महत्वकांक्षा प्रतिष्ठा,पदोन्नति,प्रलोभन से अस्वस्थ है । इसी बेचनी से वह मॅनेजिंग डायरेक्टर मार्गव को पार्टी के लिए घर बुलाता है । मार्गव खुष होकर मि.शर्मा को प्रमोशन देते हैं साथ ही साथ सुजाता को अपनी स्टेनो बना देते हैं । शर्मा निम्नवर्ग से उच्च मध्यवर्गीय बन जाता है । मि.शर्मा प्रतिष्ठा हासिल करता है अपनी पत्नी के शील और चरित्र की बलि देकर । मार्गव से सुजाता गर्भवती बन जाती है ।सुजाता के प्रति मार्गव का आकर्षण कम होता है । मि.शर्मा सभी घटनाओं से चकरा जाता है । मार्गव से प्रतिशोध लेने की भावना उसके मन में प्रबल हो जाती है ।

नाटक के दूसरे हिस्से में शंतुन छोटा आदमी मेधावी वैज्ञानिक है । उसका अधिकारी वैज्ञानिक डॉ.गोयल उसका इस्तेमाल करता है । डॉ.शंतुन के रिसर्च पेपर्स वह अपने नाम पर छपवाता है । निराश होकर शंतुन आत्महत्या करने की सोचता है । जीवन से पलायन उसे पसंद नहीं पर डॉ.गोयल शंतुन से हत्या करने के पूर्व ही

१९ श्री अरविंद देशपांडे - डॉ.शेष कृत - रक्तबीज - पृ.३ ।

खुद आत्महत्या करता है ।

` रक्तबीज` नाटक में नाटयगत नये तत्वों का प्रयोग किया है । रक्तबीज नाटक में पौराणिक मिथक का प्रयोग आधुनिक जीवन की व्याख्या करने के लिए किया है । नाटक आदि से अंततक विचार संघर्ष और चिंतन के संचन से भरा है ।

(१६) पोस्टर (सन १९७७)

मध्यप्रदेश सरकार के आदिम जाति कल्याण विभाग में कार्य करते समय डॉ.शेष ने जो अनुभव संचित किये थे,जिन पर एक कलाकार के नाते जो चिंतन चलता रहा था,उसीका प्रतीफलन ` पोस्टर` नाटयकृति के रूप में साकार हुआ । अपनी देखी,परखी,भोगी,अनुभूतियों को साकार करने वाले डॉ.शेष की विशेषता की ओर डॉ.विनय ने भी संकेत किया है --" सन १९६५ से १९७० तक का काल लेखन की दृष्टि से विरामकाल रहा है । किन्तु आदिम जाति कल्याण विभाग अनुसंधान अधिकारी का पदभार संभालते हुए उन्हें मध्यप्रदेश के आदिम जाति क्षेत्रों का भ्रमण एवं उनका जीवन करीब से देखने का अवसर मिला । साक्षात देखी हुई पीडा एकत्रित होती रही । कॉलेज जीवन के अनुभव और यह व्यथा उनके ` पोस्टर`, ` कालजयी`,` एक और द्रोणाचार्य` के पात्रों के द्वारा मुखरित हुई ।" [२०]

कथा-वस्तु --

नाटक की कथावस्तु रोचक है । पटेल एक बस्ती के बडे नेता हैं । सामान्य आदमी को वह छलता है । लोग बेचारे पिछडे वर्ग के हैं । रोटी पाना उन्हें मुश्किल बना है । छोटेलाल के पिता छन्नुलाल एक दोना चिरौंजी के बदले एक दोना नमक देते हैं । छोटेलाल फॉरेस्ट अफसरों को नशीली चीजे देकर खुश करता है । उसके सहारे वह अपने बेपार की वृध्दि करके धन कमाना चाहता है । आदिवासी इकट्ठा होकर यह शोषण खत्म करना चाहते हैं । कल्लु अपनी बीवी चैनी को पटेल की हवेली में भेजता नहीं । लोग चैनी को पकडकर शक्ति के आधार पर हवेली में ले जाते हैं । कल्लु का नेतृत्व पसंद करके सभी लोग क्रांति का नारा लगाते हैं

---

२० डॉ.विजय : डॉ.शेष कृत - बाढ का पानी - पृ.६ ।

शोषण के खिलाफ लडना चाहते हैं। वे जमीनदारी प्रथा का समूल उच्चाटन करना चाहते हैं। वे पोस्टर लगाकर क्रांति का नारा बुलंद करते है, कि वे काम की आमदनी बढाने के लिए आंदोलन छेडना चाहते हैं। अंत में फॅारेस्ट अफसर की हत्या और कल्लु की रक्षा दिखाकर डॉ.शंकर शेष जी क्रांति को सफल दिखाना चाहते हैं।

(१७) राक्षस (सन १९७६)

राक्षस नामक कृति सन १९९० इ.में.प्रकाशित हुई है। इस कृति के पाण्डुलिपि पर लेखन काल १९७६ है। इस कृति के संबंध में डॉ.सुनीलकुमार लवटे जी का कथन है -" राक्षस लोकनाटय की शैली में लिखा हुआ समुह नाटय है। समुह नाटय होने के कारण पात्रों की अधिकता का होना स्वाभाविक है। नाटक में मुख्य तथा गौण ऐसे कुल बीस पात्र हैं।

लोकनाटय परंपरा में विभिन्न लोक संगितों का होना अनिवार्य होता है। `राक्षस` में गीतों का अधिक संख्या में होना एक तरह से उसकी रंजन क्षामता का प्रतीक है। ईशस्तुति,देश-काल-वर्णन आदि के हेतु गीतों की रचना कीगई है। कवि मुक्तिबोध की रचना` समस्वर समताल` का प्रयोग भी प्रभावकारी है। लगभग बीस गीत विभिन्न ताल और छन्दो के दर्शन कराते हैं।" [२१]

कथावस्तु --

इसमें दिखाया है कि राक्षस याने हमारा विध्वसंक वैज्ञानिक अविष्कार है। सब एटम,युरेनियम,हाइड्रोजन आदि परमाणू बमों का निर्माण कर रहे हैं। महासत्ताधारिओं ने इस राक्षस के जन्म दिया है,पाला है,पोसा है।

विश्वासनगर एक ऐसा गाँव है,जिसे राक्षस ने परेशान किया है। सारे गाँव के लोग चिन्तित हैं। आखिर फैसला होता है - राक्षस के साथ समझौता किया जाए।

सामूहिक हत्या के बदले एक-एक आदमी को राक्षस के पास भेजा जाता है।

---

२१ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष,पृ.७२।

एक स्त्री उसका विरोध करती है। गाँव का मुखियाँ अपने को सुरक्षित रखकर गाँव के लोगों की बलि देता है। एक स्त्री,जो अध्यापिका है वह लडकों की बलि का विरोध करती है। वह लडकों में संगठन करती है और महासत्ताधारी राक्षास का नाश करती है।

'राक्षास' नाटक में नाटककार शंकर शेष ने पतन और उत्थान,विध्वंस और विकास,विनाश और शांति के संघर्ष को चित्रित किया है। लोकनाटय शैली में कथावस्तु का विकास किया गया है। कथा को गतिशील रखकर विकास में वे योगदान देते हैं। नाटक में कथोपकथन पर्याप्त छोटे एवं सुबोध हैं।

यह समूह लोकनाटय होने के कारण इसमें अधिक पात्र हैं चार-पाँच प्रमुख और अन्य गौण पात्र मिलाकर बीस पात्र हैं।

(१८) चेहरे (सन १९७८-७९)

सभ्यता के इस नये युग में हर एक व्यक्ति ने अपने चेहरे पर मुखौटा पहनाया हुआ है। अत: असली और नकली चेहरे को पहचानना भी एक समस्या बन बैठी है। यह अचरज की बात है कि हर कोई अपने नकली चेहरे की रक्षा करते हुए दूसरे का नकली चेहरा फाडना चाहता है और उसकी असलियत उजागर करने का प्रयत्न करता है। डॉ.विनय ने 'चेहरे' कृति के संबंध में इसी अंदाज से निम्नांकित मत व्यक्त किया है -- " चेहरे अर्थात हमारे चेहरे,सब के चेहरे,अंदर से कुछ बाहर से कुछ दिखनेवाले चेहरे। चोर की खाल में ईमानदार और साह की खाल में चोर जो जैसे दीखता है वह वैसा है भी या नहीं ? यह एक बडा प्रश्न है,जिसे लेखक इस नाटक में उठाता है। वह अपनी ओर से कुछ नहीं कहता। स्थिति - दर - स्थिति भाव और विचार के संश्लिष्ट चित्र उभरते चलते हैं। प्रत्येक चेहरा खूप अपनी वास्तविकता व्यक्त करने पर विवश हो जाता है।" [२२]

---

२२ डॉ.विनय : डॉ.शेष कृत - चेहरे - पृ.६।

डॉ.शेष की मृत्यु के पश्चात्य उनकी अधिकतर रचनाएँ प्रकाशित हुयी । ` चेहरे` का प्रथम प्रकाशन सन्मार्ग प्रकाशन,दिल्ली से सन १९८३ में हुआ ।

कथावस्तु --

इस नाटक में दृश्य चेहरे और अदृश्य चेहरे में होनेवाला अंतर बताया है । समाजसेवी मरोसेलाल की मृत्यु और उसके शव के अंत्यसंस्कार को लेकर यह नाटक लिखा गया है । अंतिम संस्कार के लिए जो लोग आये हैं वे आपस में गप्पे हाँकते हैं, शैतरज खेलते,शराब पीते हैं,छन्दों की बात करते हैं,टान्जिस्टर न होने के कारण चिंतित होते हैं,भाषण देते हैं । इस नाटक से मनुष्य की क्रूरता,संवेदनहीनता,स्वार्थी प्रवृत्ति आदि को दिखाने का प्रयास डॉ.शेष जी ने किया है ।

जो लोग समाज सेवा का काम करते हैं उनका आदर्श लोगों के सामने नहीं होता केवल लोगों का अपना चेहरा दिखाने के लिए,रस्मोरिवाजो के लिए,कर्मकाण्डो को निभाने के लिए औपचारिकता के लिए तो कोई राजनैतिक दृष्टिकोण को आँखों के सामने रखकर इस शवयात्रा में शामिल होते हैं । उस आदमी के प्रति हमदर्दी, प्यार,उसका आदर्श किसी के मन में नहीं । हर एक आदमी का ऊपर से एक चेहरा नजर आता है और अंदर से उसका दूसरा चेहरा नजर आता है । मुखौटा धारण करके हर एक आदमी जीवन जीता है ।

(१९) कोमल गांधार (सन १९७९)

` कोमल गांधार` का रचना काल सन १९७९ रहा हो । इसका प्रथम प्रकाशन पराग प्रकाशन ,दिल्ली द्वारा दिसंबर,१९८२ में हुआ । यह कृति दो भागोंमें विभक्त है ।

कथावस्तु --

डॉ.शेष जी ने यह नाटक पौराणिक आधार लेकर लिखा है । महाभारत में एक आदर्श राजनितिज्ञ के रूप में पितामह भिष्म का चरित्र सभी को ज्ञात है । वे हरवक्त राजनीति से संबंध जोडते हैं । राजनिति ही उनका सर्वस्व है । उन्होंने शादी तक नहीं की और अंतिम साँस तक अपना काम किया । धृतराष्ट्र जन्म से अंधे होकर भी (पुत्र प्राप्ति के लिए) शादी करना अनिवार्य समझाते हैं जिसके

कारण पैदा हुआ पुत्र राजकुमार बनेगा । गांधारी के साथ धृतराष्ट्र की शादी होती है । लेकिन उसे यह मालूम नहीं है कि अपना पति अंधा है । जब असलियत मालूम होती है तब इस धोखेबाज दुनिया के प्रति उनके मन में नफरत पैदा होती है । वह अंतिम सांस तक अपनी आंखोंपर पट्टी बांधती है ।अंत में धृतराष्ट्र को गांधारीसे संतान की प्राप्ति होती है । राजा पाण्डु के पुत्र हैं । यह बात मालूम होनेपर वह नाराज होती है । कौरव-पांडव बडे होनेपर अपने बंधुत्व को त्यागकर एक-दूसरे के विरोध में संघर्ष करते हैं । अपने हक के लिए पांडव लडते हैं । कुरुक्षेत्र का भयानक युध्द अब समाप्त होता है तब सारे कौरव राजकुमार खत्म हो जाते हैं । एक महारानी होकर भी अंत में गांधारी को तपोवन का सहारा लेना पडता है । उनके साथ कुंती भी है,विदुर भी है ।अंत में तीनों भी समाप्त होते हैं । इसमें गांधारी के रूप में एक आदर्श भारतीय नारी का चित्र उजागर किया है ।

(२०) आधी रात के बाद (सन १९८१)

यह कृति डॉ.शंकर शेष की अंतिम नाट्य कृति है । शिल्प तथा कथ्य में आनेवाला कसाव इस कृति में सर्वाधिक प्रौढता लिए हुए है ।

इस कृति का प्रथम प्रकाशन आर्य प्रकाशन मंडल,दिल्ली द्वारा नवम्बर, १९८३ में हुआ । यहनाटक फन्दी की तरह स्त्री पात्र रहित है ।

कथावस्तु --

हमारे समाज में आर्थिक समस्या के कारण लुटपाट,चोरी आदि प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं । दूसरी ओर प्रतिष्ठा का मुखौटा पहनकर समाज का शोषण करनेवाले लोग भी मिलते हैं ।

बंबई जैसे महानगरों में इमारत का ठेकेदार सोने से भी महँगी जमीन खरीदकर आसमान चूमनेवाली इमारतें बाँधने का काम करता है । उस ठेकेदार को कानूनी तौर से गिरफ्तार करने के लिए आये जज से चोर का परिचय हो जाता है । वह जज के घर चोरी करने जाता है । दो-तीन घन्टे तक जज तथा चोर की चर्चा होती है । ब्रीफकेस लेकर चोर निकल जाता है । जज नैतिक अध:पतन के भय से किसीप्रकार का

मुकाबला नहीं करता है । चोर को मार डालने का प्रयास होता है । वह चोर बाल-बाल बच जाता है । जज के घर से जो ब्रीफकेस चोर ले जाता है उसमें ठेकेदार के सारे जाली दस्तवेज भरे पडे थे । चोरी का उद्देश्य पंचतारांकित होटलो में शान-शौकत से शामों को गुजारनेवाले इन लोगोंका पर्दाफाश करना है । इसलिए चोर जज के घर में चोरी करता है । अदालत में जज को सजा होती है ।

यह असाधारण कोटी का नाटक है । सज्जन,प्रतिष्ठित गुन्हेगारों के षड्यंत्रों की पोल खोलने वाला नाटक है ।

निष्कर्ष --

डॉ.शेष ने अनेक नाटकों का सृजन किया । कुछ नाटक छोड दिये जाए तो सभी नाटकों का मंचन हो चुका है । बंबई का काल उनकी नाट्य यात्रा का आखरी पाडाव है । डॉ.शंकर शेष ने सामाजिक ,पौराणिक,ऐतिहासिक, समकालिन विभिन्न विषयों को चित्रित किया है । प्राचीन कथा को लेकर नये संदर्भ देने की उनकी असाधारण क्षमता ही उन्हें श्रेष्ठता ,सफलता प्रदान करती है ।

विद्यार्थी जीवन में `बिन बाती के दीप`,` बंधन अपने अपने`,` खजुराहों का शिल्पी`,` फन्दी`,` एक और द्रोणाचार्य`,` कालाजयी`, की रचना उन्होंने की । उनकी कृतियों में आरम्भ से शैली वैचित्र्य के साथ साथ विषय की विविधता दृष्टिगोचर होती है । अन्तिम पाडाव विकास की चरमसीमा कहा जायेगा । उन्होंने सामाजिक,धार्मिक,आधुनिक आदि समस्याओं को लेखन का आधार बनाया है । आधुनिक काल के वे हिन्दी नाटक को व्यापक क्षितिज प्रदान करनेवाले सशक्त नाटककार है ।